मोक्ष मार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम्।

ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद् गुणलब्धये ।।

Class 01

भूमिका

आज सप्तम अध्याय प्रारंभ होता है। पिछले छठे अध्याय में भावों का विशेष रूप से वर्णन था और तत्त्व की भाषा में कहें तो आस्रव तत्त्व का वर्णन था। किन भावों से कौन से कर्मों का आस्रव होता है, यह बताया गया था। जीव, अजीव और आस्रव तत्त्व का वर्णन एक तरह से आप लोग सुन चुके हैं। आस्रव के साथ ही यहाँ से एक नया वर्णन प्रारंभ होता है, जिसे हम संवर तत्त्व का वर्णन कह सकते हैं। संवर का मतलब है- कर्मों का रुकना। कर्मों का आस्रव होने के कई कारण बताये गये और उन आस्रवों में दो आस्रव बताए गए- एक शुभ आस्रव होता है, एक अशुभ आस्रव होता है। शुभ आस्रव पुण्य के लिए है, अशुभ पाप के लिए है, यह भी बताया गया है। जब आस्रवों की चर्चा चली तो उसमें इन्द्रिय, कषाय, अव्रत, क्रिया यह सब भी आस्रव के कारण बताए गए। आस्रव के इन सब कारणों में मुख्य रूप से जो भी आस्रव हैं वे सभी पाप आस्रव किन-किन भावों से होता है? यह पाप आस्रव किन-किन परिणामों से होता है? यह सब बताते हुए यहाँ पर अभी यह बताया जाना है कि जो आपने सुन रखा है कि शुभ आस्रव होता है। वह शुभ कैसे होता है? जो आपने सुन रखा है- इन्द्रिय, कषाय, अव्रत क्रिया इनमें जो अव्रत होते हैं वे क्या होते हैं? उसी का वर्णन करने के लिए यह सप्तम अध्याय आ रहा है।

सप्तम अध्याय में शुभ क्रियाओं का वर्णन

एक तरह से सप्तम अध्याय में आपको सभी शुभ भावों का वर्णन होने के साथ-साथ शुभ क्रियाओं के वर्णन के साथ भी इसका वर्णन किया जाना है। शुभ भावों का वर्णन तो आपने लगभग छठवें अध्याय में सीख ही लिया है। यहाँ पर आपको करना क्या है? क्योंकि भावों से ही अकेले काम नहीं चलता। हमारी मन-वचन-काय की क्रियाएँ तो हमेशा चलती रहती हैं और उन क्रियाओं को हम कैसे रोकें जो वे पाप आस्रव का कारण न बने? उन क्रियाओं को रोक कर के ही हम भाव आस्रव को रोकने की प्रक्रिया बहुत अच्छे ढंग से कर सकते हैं। अगर क्रियाएँ नहीं रूकती हैं और केवल हम भाव आस्रव को रोकने के लिए तैयार होते हैं तो हम कुछ सफल हो सकते हैं, पूर्णतया सफल नहीं हो सकते। इसलिए जो मन-वचन-काय हमारे हमेशा अशुभ से जुड़े रहते हैं, उन अशुभ निवृत्ति कैसे हो और शुभ में प्रवृत्ति कैसे हो? इस तरह से जो हम अपनी क्रियाओं को divert करके अपने अंदर एक भावों में परिवर्तन देखते हैं, वह परिवर्तन ही आस्रव से संवर का कारण बन जाता है। आस्रव का मतलब है कि जिससे कि पाप आस्रव हो रहा है और संवर का मतलब है- जिससे कि पाप आस्रव रूक जाए। आस्रव में मुख्य रूप से जो पाप आस्रव के लिए, अशुभ आस्रव के लिए

आपको बताया गया था वह इंद्रियों की प्रवृत्ति कषायों में, उद्वेग और अव्रत का भाव और कुछ 25 क्रियाएँ बताई थी। उनमें मुख्य रूप से जो अविरति है, वह एक ऐसा factor है कि अगर वही Control में आ जाए तो सब कुछ control में आ जाती हैं। अव्रती यानी विरति का अभाव, विरति यानी विरक्ति का अभाव यानी कि जो हमारे लिए पाप के आस्रव भूत कार्य है, उनसे दूर नहीं होना। उस भाव से तब तक दूर नहीं हुआ जाता जब तक कि हम उस तरह की कोई अभिसन्धि न करे।

अभिसन्धिकृता विरतिर्विषयाद् योग्याद् व्रतं भवति।

व्रत किसे कहते हैं? आचार्य कहते हैं- जो 'अभिसन्धि' पूर्वक विरति ली जाती है, उसको व्रत कहते है। उसी व्रत को समझाने के लिए यह Chapter आ रहा है कि हम अगर पाप से विरति चाहते हैं तो विरति हमें अभिसन्धि पूर्वक लेनी पड़ेगी। अभिसन्धि का मतलब क्या होता है? जैसे आप कोई भी कार्य करते हैं तो एक agreement करते हैं, अनुबंध करते हैं, एक आप शपथ भी लेते हैं और कोई न कोई आप अच्छा काम करते हैं तो उसके लिए सरकार से भी आपके लिए एक अनुबंध हो जाता है। Documents तैयार हो जाते हैं, अनुबंध हो जाता है। इसी तरीके से पाप आस्रव मैं नहीं करूँगा, मैं पाप आस्रव को रोकता हूँ, मैं संवर के लिए तत्पर होता हूँ। इसके लिए आपको एक अपने पास से एक document तैयार करना पड़ेगा, बाद में उसकी रजिस्ट्री भी करानी भी पड़ती है और वह कोई भी मतलब जो व्रत लिए हो जो उस तरीके की class पास किए हो उसके सामने आप उसकी रजिस्ट्री करा सकते हो। यह जो विरति है, इस विरति को यहाँ पर आस्रव के रोकने का कारण कहा जा रहा है। पहला सूत्र जो यहाँ पर आ रहा है वह यही है-

हिंसानृतस्तेयाऽब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥**7.1**॥

क्या कहते हैं? 'विरतिर्व्रतम्' विरति का नाम व्रत है। विरति का मतलब कि उस चीज से विरक्त हो जाना, दूर हट जाना। उस मे हमारा एक attachment था, उससे जो हमारा एक झुकाव था, उसमें जो जुड़ाव था, वह हट जाना। उस विरति को ही विरक्त कहा जाता है और वह विरति केवल भावों से नहीं हो सकती जब तक कि हम भावों में भी यह बिल्कुल decide न कर ले कि हमें ऐसा नहीं करना है तब तक वह विरति नहीं होगी। क्योंकि भावों में जब आप यह decision ले लोगे तभी जो है, आप इस तरीके का कोई document तैयार कर पाओगे और जब आपके पास document तैयार हो जाएगा तो फिर आप सबके समक्ष अपनी घोषणा भी कर सकोगे। कैसी? हमने इस तरह से हिंसा आदि जो यह पाँच पाप है, इनसे हमने विरति ले ली है। यह declaration हो जाता है और यह declaration जब पूरा social हो जाता है, social media पर भी पहुँच जाता है तो आपके लिए उससे एक राहत भी मिलती है और दूसरों को पता पड़ जाता है कि हाँ! अब आपके लिए इस तरीके का रास्ता बन गया है और आप इस तरीके से अपनी planning अपने जीवन के लिए कर रहे हैं।

व्रत साक्षी पूर्वक लिए जाते हैं

ये जो व्रत लिए जाते हैं, ये केवल भावों से नहीं लिए जाते। बहुत अच्छी बात यह है कि ये साक्षी पूर्वक लिए जाते हैं। किस पूर्वक? साक्षी यानि जब भी कोई हमें समाज में रहकर के समाज के ही अनुसार या समाज से ऊपर उठने का कोई काम करना होगा तो हमें एक साक्षी बनाना पड़ता है। केवल हमें अपने अंदर व्रत ले लेने से काम नहीं होगा, हमें दूसरे को साक्षी बनाना पड़ेगा। कोई भी तरीके का आप जब अपना नया trust बनाते हैं या कुछ करते हैं तो उसमें भी आपको किसी दो चार लोगों की गवाही या किसी के हस्ताक्षर उस पर लगाने होते हैं तभी वह trust को valid होता है और तभी government उसे पास करती है। इसी तरीके से trust मतलब अब वह trust छोड़ो, trust मतलब विश्वास। अगर आपके अन्दर इस बात का विश्वास आ जाता है कि यह आस्रव है, आस्रव से हमें बचना है, आस्रव को हमें रोकना है, हमें संवर करना है तो संवर करने के मुझे सबसे पहले जो सूत्र दिया गया है, विरति करना है तो विरति करने के लिए हमें अपने आप के साथ नहीं, दूसरे को साक्षी बनाकर के हमें पूरी social media पर यह declaration करनी पड़ेगी कि मैंने जो है इन व्रतों को धारण कर लिए हैं। यह social media कहाँ से आ गया? वह इसलिए कि लोगों को पता पड़ जाए। लोगों को बताने की क्या जरूरत है? दूसरों को दिखाने के लिए कर रहे हैं क्या? दिखाने के लिए नहीं! यह एक सामाजिक रुप से उद्घोषणा हो जाती है, जिसके माध्यम से आप भी उस बंधन में बंधने के लिए फिर हमेशा अपना मन बनाए रखेंगे। क्योंकि जब तक किसी चीज का पूरा valid तरीके से declaration नहीं होता तब तक वह चीज valid नहीं मानी जाती।

government से भी **agreement** करना पड़ता है

कोई भी चीज government की है, उसमें अगर आप entry ले रहे हो या कोई भी चीज आप government के through अपनी आगे बढ़ाना चाह रहे हो तो government का certificate आपके साथ में या government की मोहर आपके पास तब लगेगी जब आप उस चीज से इतने agreed हो जाओ कि जो government की conditions है, वह सब fulfill कर दो। तब वह government आपसे कहेगी कि हाँ! यह आपने कर दिया। आपका registration हो गया है। अब जो है आपको कोई problem नहीं है। आपको कोई problem आती है तो हमको बताना। ISI mark लग गया, government की मुहर लग गई। कहीं SDM के signature चाहिए, कहीं IAS collector के signature चाहिए। कहीं न कहीं कुछ न कुछ होता है। आप अगर विवाह भी करते हो, किसी के साथ कोई आस्रव या बंध के लिए आप तैयारी करते हो तो उसमें भी साक्षीपने की जरूरत होती है। हमने विवाह किया है! समाज में declare होता है कि नहीं होता? तुमसे क्या मतलब हमें तो अकेले करना था। ऐसे नहीं चलेगा! समाज की व्यवस्थाएँ, समाज की साक्षी पूर्वक, समाज में रह कर के, समाज में declare करके करनी पड़ती हैं। ऐसे ही जब हमने बंधन स्वीकार किये हैं तो उसके लिए जैसे हम declare करते हैं, वैसे ही जब हम बंधन तोड़ते हैं तो हमें उसके लिए भी declare करना पड़ता है।

देव गुरु की साक्षी

आचार्य कहते हैं कि ये व्रत हमेशा साक्षी पूर्वक लिए जाते हैं। मुनि महाराज के व्रत भी होते हैं, श्रावक के व्रत भी होते हैं और वे सब इसी में से होंगे। हिंसा, अनरत मतलब झूठ, इस्तय मतलब चोरी, अपभ्रम मतलब कुशील और परिग्रह मतलब यह मेरा है, यह मेरा है, इस तरह का भाव। इन पाँचों से विरति होने पर व्रत आता है, तो वह व्रत जो है साक्षी भावपूर्वक लिया जाता है और उस व्रत में भी साक्षी कौन-कौन बन जाते है?

'अप्प सक्खियं परसक्खियं'

मेरी आत्मा सब से पहले साक्षी और जो दूसरे लोग है हमारे सामने वे भी सब साक्षी हैं। 'देवता सक्खियं' मतलब देवता भी उसके साक्षी हैं। 'गुरु सक्खियं' मतलब गुरु भी साक्षी होते हैं। ये सब साक्षी होने चाहिए। ये सब साक्षी होंगे तो आपके उपर जो मोहर लग जाएगी उससे फिर आप कभी भी पीछे नहीं हटेंगे। जो आपके लिए government की तरफ से मिलेगा, वह तभी मिलेगा जब आप उस condition के अनुसार चलेंगे। अगर आप जो है कुछ भी उसमें जो rules, regulations हैं, उनका आप अगर पूरा का पूरा आपको जो follow करना है वह नहीं करते हैं तो आपके लिए फिर वही साक्षी में उसका cancellation भी किया जा सकता है। इसलिए साक्षी की जरुरत होती है तो वही चीज यहाँ पर बताई जा रही है कि जब आप कोई भी अनुबंध करते हैं तो वह साक्षी में होता है तो यह भी एक अनुबंध है। यह शुभ का अनुबंध है और जो आप करते हो संसार में वह सब अशुभ का अनुबंध है। आप कोई मकान लेते हो, किसी से विवाह करते हो, कोई भी business शुरू करते हो, सब से कोई न कोई आप contact करके agreement बना करके आप अपना अनुबंध करते हो तब जाकर के वह चीज आगे बढ़ती है। उसी तरीके से आपको जब इधर से टूटना है, इधर से हटकर के इधर अनुबंध करना है- मैं व्रत ले रहा हूँ, मुझे व्रत लेना है तो वह व्रत भी जो है आपके लिए एक अनुबंध है।

अनुबंध का अर्थ

यह जो अव्रत से दूर हुआ व्रत में आया यानि अव्रत की प्रवृत्ति छोड़ी, व्रत की प्रवृत्ति शुरु कर दी तो यह प्रवृत्ति भी उसके लिए पाप से हटकर के पुण्य की ओर आना है और यह अशुभ का संवर होता है और शुभ का बंध है। अनुबंध मतलब कहीं न कहीं बंध तो है। जब तक हम इस किसी न किसी तरीके की कोई भी activity कर रहे हैं, वह हमारे लिए बंध का कारण तो होती हैं लेकिन वह बंध हमारे लिए दोनों तरीके से होता है। अगर हम वही activity अशुभ के साथ कर रहे हैं तो वह पाप बंध का कारण है, वही activity हमारी शुभ के साथ होती है तो पुण्य बंध का कारण है। बंध तो दोनों में है लेकिन इसमें भी कौन सा बंध हमारे लिए better है? और कौन सा बंध हमारे लिए worst है? यह भी ध्यान रखना पड़ेगा।

Class 02

अशुभ क्रियों को शुभ बनाओ

अशुभ का बंध हमारे लिए कैसा होता है? जिससे पाप का आस्रव, पाप का बंध हो, अच्छा होता है? कैसा होता है? अच्छा नहीं होता। शुभ का बंध? आप कहो कि नहीं महाराज! हमें शुभ का भी बंध नहीं चाहिए, हमें तो मोक्ष चाहिए। बातें करने से मोक्ष नहीं हो जायेगा। पहले तो आपको अपनी activity, अपने thought process पहले change करनी पड़ेगी। change करने का मतलब जो आपके अंदर inauspicious है जो activity चल रही थी, पहले उसको आप auspicious activity में लाओ। यानी जो आपके लिए अशुभ चल रहा था, उसको पहले शुभ बनाओ। शुभ जब बनेगा तब वह जो आप के लिए आपको संसार बनाने का कारण बन रहा था, वह संसार का कारण जब छूट जाएगा तब आपके लिए मुक्ति की बात आएगी। पहला process यह है कि पहले आप अशुभ से हटो। अशुभ आस्रव को रोको। जो आपने अनुबंध संसार में तरह-तरह के कर रखे हैं उनको कम करो या बिल्कुल समाप्त करो और उसको करने के बाद में आप शुभ का अनुबंध करो तब आपकी आगे की यात्रा शुरू होगी। सात तत्त्व बताए गए हैं। उन सात तत्त्व में संवर तत्त्व भी है, निर्जरा तत्त्व भी है और मोक्ष तत्त्व भी है। हम अगर सीधा-सीधा मोक्ष तत्त्व देखें, हमें तो केवल मोक्ष के लिए करना है। हमें न शुभ चाहिए, न अशुभ चाहिए। आप एक बंध से छुड़ाकर हमें दूसरे बंध में क्यों डाल रहे हैं? हमें bonding चाहिए ही नहीं। न अशुभ कर्मों की चाहिए, न शुभ कर्मों की चाहिए। आप कह तो लोगे लेकिन यह process है ही नहीं। आपके लिए कभी मोक्ष की भावना तो हो सकती है लेकिन मोक्ष की प्रक्रिया अगर शुरू होगी तो मोक्ष का process यहीं से गुजरता है। कहाँ से? इसी सूत्र से, सबसे पहले आपको यही करना पड़ेगा।

व्रत मोक्ष मार्ग के लिए **admission** है

आप कहो हमें तो direct निर्जरा करना है, मोक्ष करना है। हमारा तो उसी पर श्रद्धान है। हमें यह अशुभ से शुभ नहीं चाहिए। यह भी तो एक बंध ही है। इससे भी तो संसार ही होगा क्योंकि बंध का नाम संसार है। ये सब बातें आपको आ सकती हैं क्योंकि आपने आगे की जो book है या आगे के जो chapter या आगे का जो course है, वह आपने पढ़ लिया। लेकिन जब भी आपको कोई process करनी पड़ेगी तो वह process यहीं से करनी पड़ेगी। आप बिना किसी class में admission लिए B.A, M.A.. की कोई भी book तो पढ़ सकते हो। लेकिन जब तक class में admission होने का आपके लिए , certificate नहीं मिल जाता तब तक आप class उसके student नहीं कहलाएँगे और तब तक आप का level वह नहीं आयेगा कि आप खुद भी कह सको कि हमने यह class पढ़ ली है और हम यह class पढ़ा सकते हैं। यह कैसे संभव है? जो process है, उसी के through चलो। आप कितने ही intelligent हो, आप अपने घर पर बैठे-बैठे intelligence दिखा सकते हो लेकिन आपकी intelligently valid तब होगी जब आपने कोई college में

admission लिया होगा। आपने उसका कोई exam दिया होगा और वह exam पास होने के बाद आपको जो certificate मिलेगा उससे आप की validity बनेगी कि You are bachelor or you are Master degree holder. आप कहो हम तो केवल अपना पढ़ लेंगे, अपना कर लेंगे। पढ़ने से कुछ नहीं होता। एक बिना पढ़े भी इसको कर सकता है और एक पढ़-लिखकर भी कर सकता है। जो पढ़-लिख गया है, वह नहीं करता है, उसका अशुभ बंध से जब तक शुभ बंध नहीं होगा तब तक उसे शुद्ध की कभी प्राप्ति नहीं हो सकती। यह बात भी आप जान कर रखो कि शुद्ध कोई चीज है नहीं। जब तक संसार है, तत्त्वार्थ सूत्र क्र अनुसार तब तो दो ही चीजें हैं- अशुभ या शुभ। अब आपके लिये दो ही आस्रव हैं- अशुभ का आस्रव और शुभ का आस्रव। अशुभ में छूटने के बावजूद भी आस्रव तो देखो साम्प्रायिक ही रहैगा। लेकिन वह सम्प्रायिक की quality अलग-अलग होगी। अगर वह अशुभ के साथ है वह अलग है और शुभ के साथ है वह अलग है।

पुण्य और पाप की निर्जरा कभी एक साथ नहीं होती

अब इस आस्रव में भी हम जब रोक लगा लेते हैं तो यह आस्रव का रुकना भी संवर है। अशुभ आस्रव का रुकना, पाप का रुकना, यह क्या हो गया? इसी का नाम तो संवर है। यही संवर सब से महत्वपूर्ण है। यह संवर होने के बाद ही आप जो है निर्जरा कर पाएँगे और निर्जरा होगी तो आप मोक्ष पथ के अनुगामी कहलाएँगे। निर्जरा किसकी करनी है? आप तो कहना शुरू हो जाते है। हमें तो पुण्य-पाप दोनों की करनी है। तीन काल में न कभी हुई और न तीन काल में आप कभी कर पाओगे, न किसी ने की। पुण्य और पाप दोनों की निर्जरा एक साथ कभी न हुई, न होगी। करना क्या है? वह आपको यहाँ बताया जा रहा है। सबसे पहले पाप का संवर और पाप की ही निर्जरा होती है। अच्छे ढ़ंग से कान खोल कर सुनो, नींद तो नहीं आ रही। सबसे पहले किसकी निर्जरा होगी? पाप की। संवर किसका होगा? पाप का। आस्रव किसका रोकना होगा? पाप का। सबसे पहले यही process है और इसी process से चलकर के आपके लिए निर्जरा भी मिलेगी, बंध से मुक्ति भी मिलेगी। इसी से ही आपको मोक्ष मिलेगा। जो मोक्ष का process है, उस पर चलोगे, time लगेगा लेकिन रास्ते पर चलोगे तो काम हो जाएगा। रास्ते से हटकर कितनी भी बातें करते रहो, बातें करने से किसी को कुछ मिला नहीं है। यह क्या है? यह एक तरह का संवर तत्त्व यहाँ बताया जा रहा है। आस्रव तत्त्व हो चुका, संवर यहाँ बताया जा रहा है।

संवर किसका करना **?**

आगे आठवाँ अध्याय आएगा, उसमें बंध की व्यवस्था बताई जाएगी। बंध के हेतु बताए जाएँगे। बंध का प्रकरण बाद में आएगा और मुख्य रूप से जो निर्जरा का वर्णन है, वह नौवें अध्याय में आएगा और दसवें अध्याय में मोक्ष का वर्णन आएगा। यह व्यवस्था है। इसको क्या समझना? संवर। अगर हमने यह श्रद्धा कर रखी है कि आस्रव संसार का कारण है, तो संवर मुक्ति का कारण है तो मुक्ति के कारण को अपनाना पड़ेगा और मुक्ति का कारण इस संवर से हो करके जाता है। पाप और पुण्य दोनों का संवर एक साथ

कदाचित कभी भी तीन काल में किसी को नहीं हुआ। सबसे पहले संवर होगा तो इसी का करना पड़ेगा। हिंसा का, झूठ का, चोरी का, कुशील का और परिग्रह का, इसका संवर करो मतलब इसको रोको। इसमें जो अपनी desires इसके प्रति जो लगी हुई हैं उनको control करो, उनकी limit बनाओ और वह संवर जब आपके लिए होगा तभी वह संवर जितना हो जाएगा, उतना ही पाप का बंध रुकेगा। उतने ही पाप की फिर आप उसकी निर्जरा भी कर पाओगे और वही संवर आपको फिर पूर्ण संवर के लिए भी कारण बनेगा, अगर आपने थोड़ा संवर किया है। इसलिए यह संवर तत्त्व का वर्णन यहाँ पर किया जा रहा है। जो संवर हमारे लिए मुख्य रूप से प्रवृत्यात्मक है। कैसा? संवर दो प्रकार के होते हैं-

1. एक प्रवृत्ति रूप और
2. एक निवृत्ति रूप।

प्रवृत्ति का मतलब हमने अभी एक चीज को छोड़ करके दूसरा करना शुरू कर दिया। अभी हम कर तो रहे हैं तो करना जो हो रहा है, उसका नाम है- प्रवृत्ति। जब निवृत्ति होती है तो निवृत्ति का मतलब है- कुछ भी नहीं करना। उसको क्या बोलेंगे? निवृत्ति रूप संवर। यह निवृत्ति रूप जो संवर है, वह आपको नौवें अध्याय में दिखाया जाएगा। पहले क्या करना? प्रवृत्ति रूप संवर करना क्योंकि यह प्रवृत्ति रूप संवर जो कर लेगा वही आगे जाकर निवृत्ति रूप संवर कर पाएगा।

समिति

आपने दो शब्द सुने होंगे- एक समिति और एक गुप्ति। यहाँ उससे पहले क्या बताया जा रहा है? व्रत। पहले व्रत होते हैं, फिर समिति होती है फिर गुप्ति होती है। व्रत होंगे तो ही समिति होगी तो ही गुप्ति होगी। जो व्रत हैं, उन व्रतों में समय के अनुसार प्रवृत्ति करने का नाम है- समिति। समिति में भी हम क्या कर रहे हैं? प्रवृत्ति कर रहे हैं। लेकिन वह प्रवृत्ति कैसे कर रहा है? बिल्कुल सावधानी के साथ। जो हमारी careful activities हैं, जिसमें कि किसी भी जीव को कोई भी हानि न पहुँचे, किसी भी जीव के लिए हिंसा न हो इस तरह की हम awareness रख करके, जो हम activity करेंगे, वह कहलाती है- समिति और यह समिति भी तभी संभव है, जब पहले यह विरति हो। समिति में प्रवृत्यात्मक संवर होता है और गुप्ति में निवृत्तयात्मक संवर होता है, जो आगे नौवें अध्याय में आपको बताया जाएगा। इसलिए नौवें अध्याय की संवर और निर्जरा की जो तैयारी है, वह सातवें अध्याय से शुरू होती है। वह तैयारी दो तरीके से है। यहाँ एक सूत्र और आगे लिखा हुआ है-

देशसर्वतोऽणुमहती।।**7.2**।।

यह दो तरीके की तैयारी है। 'देश' मतलब थोड़ा एक देश, 'सर्वतः' मतलब सब ओर से, पूरा। अगर देश थोड़ी तैयारी की है तो वह अणु रूप में विरति कहलाएगी, अणुव्रत कहलाएँगे। अगर पूर्ण रूप से तैयारी कर ली है तो 'महती' मतलब महा व्रत कहलाएँगे, महा विरति कहलाएगी। यह दो तरीके की विरतियाँ होती हैं। थोड़े की हिम्मत हो तो थोड़ा करना, पूरे की हिम्मत हो तो पूरा करना। पूरा किया तो महाव्रत, थोड़ा किया तो

अणुव्रत। विरत में विरति है और विरति में ये चीजें common है। अगर थोड़ा-थोड़ा हिंसा का त्याग किया, थोड़ा कुशील का, थोड़ा झूठ का, थोड़ा चोरी का, थोड़ा परिग्रह का तो यह देश व्रत हो गये, अणुव्रत हो गये। इसी को बोलते हैं- संयतासंयत भी हो गया। अगर एक साथ हमने पूरा त्याग कर दिया, मन से, वचन से, काय से, कृत से, कारित से, अनुमोदना से 108 प्रकार के जो आस्रव के द्वार जो जीव अधिकरण में बताए गए थे, वे सब अगर पूरे हमने त्याग कर दिए तो वह कहलाया महाव्रत।

'सर्वत्तः' सब ओर से, सब ओर से मतलब भीतर से बाहर से, ऊपर से नीचे से, यहाँ से वहाँ से, इस देश से उस देश से, इस काल में, उस काल में सर्वतः सभी द्रव्य, सभी क्षेत्र, सभी काल, सभी भाव। हर स्थिति पर इस तरह से जो विरति हुई, इसका नाम कहलाएगा महाव्रत और जो थोड़ी-थोड़ी विरति होती है, थोड़ा-थोड़ा आगे बढ़ रहे हैं, थोड़े-थोड़े से हम व्रत ले रहे हैं तो यह कहलाता है- देश व्रत, अणुव्रत।

Class 03

व्रत लेने की भावना न होना सम्यग्दृष्टि का गुण नहीं

आचार्य कहते हैं- संवर करने के लिए आपको विरति अपनानी पड़ेगी और विरति करने का मतलब आप केवल भावों से काम नहीं चला पाएँगे, जो आपने छठवें अध्याय में सुन लिया। भैया! भाव ही कर लो, तीर्थंकर बन जाएँगे। आपने महाराज! उस दिन यही कहा था, भाव ही कर लो, भाव से तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो जाएगा। हो तो जाएगा लेकिन उस भाव में भी जो विशुद्धी आएगी वह विशुद्धी भी आपको इन्हीं विरति के माध्यम से आएगी। जो व्यक्ति तीर्थंकर बनने की भावना करेगा या सोलह कारण आदि भावना भाएगा, उस व्यक्ति के अन्दर ऐसा नहीं होगा कि विरति से विरति हो। विरति से विरति सुनी है कभी? विरति से विरति हो, ऐसा नहीं होगा, उसका मन तो विरति में लगेगा वह भले ही थोड़ा ले पाए। नहीं ले पाए वह अलग बात है। लेकिन वह सम्यग्दृष्टि जो होगा, जो दर्शन विशुद्धी आदि भावना रखेगा, उसके अन्दर भी विरति की तीव्र भावना होगी।

जिन्हें विरति से ही विरति है, वह कभी सम्यग्दृष्टि तीन काल में हो ही नहीं सकते। विरति से विरति क्या होती है? नियम नहीं लेने का नियम। मतलब चारित्र नहीं धारण करने का संकल्प। जिन्होंने इतना बड़ा संकल्प ले रखा है, वह सम्यग्दृष्टि हो कैसे सकते हैं? तीन काल में नहीं हो सकते। सम्यग्दृष्टि जीव की तो चारित्र के प्रति इतना रुझान रहता है, लगाव रहता है, उत्सुकता रहती है कि वह कभी नहीं भी ले पाए तो अपनी असमर्थता पर अपनी आत्म निंदा करेगा। यह नहीं कहेगा कि अगर नहीं ले रहा है तो बहुत बढ़िया है, इसी से अच्छे है या हमें लेना ही नहीं है। यह भावना नहीं होती है। जिन गृहस्थों मे ऐसी भावना आ जाती है कि हम केवल पढ़-पढ़ कर ही बंध और मोक्ष को प्राप्त हो जाएँगे, बंध से हमको मुक्ति मिल जाएगी।

पढ़ने से किसी को कुछ नहीं हुआ, पढ़ने से न आप के भाव बनेंगे, न आपकी कोई क्रिया आएगी और जब तक यह नहीं होगा तब तक मोक्षमार्ग शुरू होगा ही नहीं। इसी को आचार्यों ने चारित्र कहा है।

'असुहादो विणविती सुहे पवित्तीय जाण चारित्तं, वद समिदि गुत्ति रूवं'

यह इसीलिए आगे कहा गया। यह व्रत समिति और गुप्ति रूप यह चारित्र जब तक शुरू नहीं होगा तब तक विरति नहीं होगी, संवर नहीं होगा और संवर के बिना कोई भी आगे का मोक्ष मार्ग बन नहीं सकता है। अतः सबसे पहले यह प्रवृत्ति रूप संवर है। यह कैसा संवर है? प्रवृत्ति! प्रवृत्ति क्या है? मैं हिंसा को छोड़ता हूँ, अहिंसा को अपनाता हूँ। यह प्रवृत्ति हो गई न, अपना तो रहा है न कुछ। मैं झूठ नहीं बोलूँगा, सत्य बोलता हूँ। झूठ नहीं बोल रहा है, सत्य तो बोल रहा है, बोलने में भी प्रवृत्ति हो रही है। मैं बिना दी हुई किसी की वस्तु को ग्रहण नहीं करूँगा। दी हुई वस्तु तो ग्रहण कर रहा है। मैं कुशील का त्याग करके ब्रह्मचर्य को अपनाता हूँ। तुम कुशील को छोड़कर तू ब्रह्मचर्य को अपनाने में तो लग रहा है। मैं परिग्रह को छोड़कर के अपरिग्रह में आता हूँ तो परिग्रह को छोड़कर अपरिग्रह में आने की भी यह प्रवृत्ति है, मेरा यह परिग्रह नहीं है। यह कुशील भाव मेरा नहीं है। यह प्रवृत्ति छोड़ करके दूसरी प्रवृत्ति को अपनाना यह भी एक प्रवृत्ति है। इस प्रवृत्ति से भी संवर होता है। इस संवर को प्रवृत्यात्मक संवर कहा जाता है। यही संवर आगे निवृत्ति रूप जो संवर होगा, गुप्ति में जाने लायक, जो सामायिक आदि चारित्र के रूप में एकदम मध्यस्थ भावना रूप होगा, उस संवर के लिए यह कारण होगा। जिसने इसका अभ्यास किया है वही निवृत्ति रूप संवर कर पाएगा। जिसको इस प्रवृत्ति रूप संवर का अभ्यास नहीं है, उसको निवृत्ति रूप से संवर भी नहीं आएगा।

इसीलिए आचार्य कहते हैं -

'कृतव्रतपरिकर्मा हि साधुः सुखेन संवरं करोति'

यह आचार्य पूज्य पाद महाराज की पंक्तियाँ हैं। क्या कहा? 'कृतव्रतपरिकर्मा' जिसने व्रतों का परिकर्म कर लिया है। परिकर्म जानते हो? बहुत बड़ा, जिसे परिकर बोलते हैं। एक व्रत होता है जिसके साथ बहुत सारी चीजें जुड़ी होती है। व्रतों का पूरा का पूरा जिसने परिकर्म अपना लिया है, कर लिया है, 'हि सुखेन संवरं करोति' जो निवृत्ति रूप संवर है, उसका वह सुख से होता है, जिसने इसका अभ्यास कर लिया। सुख से होने का मतलब जब चित्त बिल्कुल अपनी आत्मा में स्थिर हो। चित्त में किसी भी तरह का बाहरी कोई विकल्प आए ही न। यह कब संभव होता है? जब हमने प्रवृत्ति रूप संवर किया होगा व्रतों में तो हमें कभी भी अशुभ का कोई भी भाव आएगा ही नहीं और वही संवर हमारे लिए निवृत्ति रूप संवर के लिए यानी चित्त की निवृत्ति के लिए, चित्त निरोध के लिए, चित्त की एकाग्रता के लिए वह कारण बनता है। वह निवृत्ति रूप संवर कहलाता है। उस समय जो संवर होता है, वह उसका मतलब है, वह संवर पूर्ण संवर होता है। क्योंकि उसका मन भी किसी आत्मा के अलावा अपनी स्व आत्मा या परम आत्मा, उत्कृष्ट आत्मा, उसके अलावा उसका चित्त् कहीं भी नहीं लग रहा है। वह कहलाता है- परम संवर। वह परम संवर कब होगा? जब इस तरह से अभ्यास हो चुका होगा

अहिंसा में सब शामिल है

सभी तरह के व्रत हैं, आगे व्रतों की भावनाएँ बताई जा रही हैं। उन व्रतों की रक्षा करने के भी और व्रत होते हैं या यूँ कहें यह जो पाँच व्रत हैं, इन पाँच व्रतों में भी मुख्य तो देखा जाए तो एक ही व्रत होता है- अहिंसा व्रत। व्रत तो एक ही है। एक ही में सब कुछ शामिल हो जाता है। अगर हमें अहिंसा समझ में नहीं आती तब हमारे लिए कहा जाता है- सत्य बोलो, चोरी नहीं करो, कुशील से दूर हटो, परिग्रह से मुक्ति करो, लेकिन है तो सब यह किसके लिए? अहिंसा के लिए। अहिंसा की रक्षा करने के लिए यह अहिंसा का एक परिकर्म है। यह क्या है? परिकर्म। आगे अगर हम इसको पूरा एक मान लेंगे, जैसे ये अणुव्रत हैं तो फिर इनकी भी रक्षा करने के लिए और बहुत बड़ा परिकर है। गुण व्रत हैं, शिक्षा व्रत है, ये इनके परिकर है, यह इनकी की भी रक्षा करेंगे। अगर हम महाव्रत को अपना लेते हैं तो महाव्रतों की रक्षा करने के लिए बहुत बड़ा परिकर है। समितियाँ हैं, गुप्तियाँ हैं, चारित्र है, परिषय है, भावनाएँ है, सब कुछ है। यह सब क्या है? यह परिकर है और इस पूरे परिकर को लेकर चलो। जितना अच्छा परिकर होगा उतना ही भीतर का भगवान अच्छा लगेगा।

परिकर का महत्व

परिकर समझ रहे हो न? कभी आपने कोई ऐसी भगवान की वेदी या प्रतिमा देखी न जिसके आसपास जो है, खूब अच्छा परिकर बना हुआ हो मतलब कि एक भगवान तो बीच-बीच में बैठे हैं और कभी आपने देखा होगा कुछ पुरानी मूर्तियों में जो side से चौबीसी बनी हुई है। ऊपर दुंदुभी बज रही है, इधर यक्ष यक्षिणी खड़े हैं, ऊपर छत्र लगे हैं। पूरा परिकर जो है बहुत भरा-भरा सा दिखाई देता है और उसके बीच में आपको भगवान दिखाई देते हैं। चांदखेड़ी में जाकर देखना। जो ऊपर चांदखेड़ी में दर्शन है, जहाँ प्रतिमा पुरानी होगी और परिकर इस तरीके का बना हुआ होगा, वहाँ पर आपको परिकर नहीं दिखाई देगा। दिखाई क्या देगा? भगवान। लेकिन परिकर से भगवान अच्छे दिखाई देते हैं। परिकर इसलिए बनाया जाता है क्योंकि इससे इतना भराव आ जाए कि हमारा मन कहीं और न जाए भगवान में ही रह जाए। खाली भगवान होंगे तो मन भी उचट जाएगा। परिकर भरा हुआ होता है और उसमें फिर बीच में भगवान होते हैं तो मन कहीं नहीं जाता, आप देख लेना। इसलिए परीकर्म जितना ज्यादा होगा, जितना आप उस भीतर एक व्रत है और उसका बाहर परिकर, वह परिकर जितना अच्छा होगा उतना ही भीतर वह व्रत अच्छा लगेगा। परिकर जितना सुंदर होगा, बहुत ज्यादा उसमें नक्काशी होगी, बहुत ज्यादा उसमें designing होगी, बहुत गहराई के साथ उसमें सब कुछ कारीगरी की गई होगी, उतने ही वह अंदर के भगवान भी उतने ही आपको अच्छे लगेंगे। इसी तरीके से यह व्रतों का परिकर्म भीतर का भी और बाहर का भी यह दोनों जो अपनाता है तब उसके लिए अपनी भगवान आत्मा अच्छे ढंग से दिखाई देती है।

सुन रहे हो, भगवान आत्माओं? भगवान आत्मा का मतलब क्या है? तुम्हारी आत्मा में भी भगवान है। लेकिन वह भगवान तुम्हें तब दिखाई देगा जब आप इस तरह की प्रक्रिया को अपनाओगे। जहाँ परिकर ही नहीं है, कोई वृत नहीं है, केवल पाषाण-पाषाण है और उसमें आप कहते रहो, यह भगवान है, यह भगवान है। भगवान आत्मा! सुन रहा है कि नहीं? तब निकलने लगेगा, बिल्कुल सही, बिल्कुल सही। उससे क्या हो जाएगा? पत्थर से पत्थर के बने रहोगे, उसमें नक्काशी तो करो, उसमें छेनी तो लगाओ, कुछ उभारो तो, कुछ उसमें से निकालो तो जो जैसा गढ़ा है, उसे गढा रहने दो। तो पत्थर कभी भगवान में कैसे बनेगा? कैसे दिखाई देगा पत्थर में से भगवान? उसी पत्थर में से ही सब नक्काशी हो करके उसी से ही परिकर्म बनता है, परिकर बनता है और उसी से ही भगवान बन जाते हैं और वही पत्थर फिर कितना शांति देने वाला आकर्षक लगने लग जाता है और वही पत्थर फिर जो पाषाण का वही भगवान के रूप में सामने आ जाता है तो फिर सब वहाँ पर उनकी पूजा करते हैं, आराध्य बन जाता है। इसी तरीके से यहाँ पर समझो, यह सब परिकर अब आगे बताये जाना है। हर एक व्रत की पाँच-पाँच भावना है।

तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥**7.3**॥

'तत्' मतलब यह जो व्रत लिए, इनकी स्थिरता के लिए, यह स्थिर बने रहे। जैसा लिया वैसा ही बना रहे इसके लिए आपको पाँच-पाँच भावनाएँ दी जा रही हैं। एक-एक व्रत की पाँच भावनाएँ! पाँच व्रतों की कितनी हो गई? पच्चीस। इतना परिकर तो हो गया। पच्चीस चीजें आपको ध्यान रखना है। तब व्रत में कुछ निखार आएगा। वे भावनाएँ आपको धीरे-धीरे अच्छे ढंग से बताई जाएँगे जिनके माध्यम से हम अपने व्रत्तों में निखार लाएँगे। आज के लिए इतना ही पर्याप्त।